कैलास ने पूछा- आप और मैं साथ पढ़ते थे, इसे आप स्वीकार करते हैं ?

नईम- अवश्य स्वीकार करता हूँ।

कैलास- हम दोनों में इतनी घनिष्ठता थी कि हम आपस में कोई परदा न रखते थे, इसे आप स्वीकार करते हैं ?

नईम- अवश्य स्वीकार करता हूँ।

कैलास- क्या उस समय आपने मुझसे यह नहीं कहा था कि कुँवर साहब की प्रेरणा से यह हत्या हुई है ?

नईम- कदापि नहीं।

कैलास- आपके मुख से ये शब्द नहीं निकले थे कि बीस हजार रु. की थैली है ?

नईम जरा भी न झिझका, जरा भी संकुचित न हुआ। उसकी जबान में लेशमात्र भी लुक्नत न हुई, वाणी में जरा भी थरथराहट न आयी। उसके मुख पर अशांति, अस्थिरता या असमंजस का कोई भी चिह्न न दिखाई दिया। वह अविचल खड़ा रहा। कैलास ने बहुत डरते-डरते यह प्रश्न किया था। उसको भय था कि नईम इसका कुछ जवाब न दे सकेगा। कदाचित् रोने लगेगा। लेकिन नईम ने निश्शंक भाव से कहा- सम्भव है, आपने स्वप्न में मुझसे ये बातें सुनी हों।

कैलास एक क्षण के लिए दंग हो गया। फिर उसने विस्मय से नईम की ओर नजर डालकर पूछा- क्या आपने यह नहीं फरमाया कि मैंने दो-चार अवसरों पर मुसलमानों के साथ पक्षपात किया है और इसलिए मुझे हिन्दू-विरोधी समझकर इस अनुसंधान का भार सौंपा गया है।

नईम जरा भी न झिझका। अविचल, स्थिर और शांत भाव से बोला- आपकी कल्पना-शक्ति वास्तव में आश्चर्यजनक है। बरसों तक आपके साथ रहने पर भी मुझे यह विदित नहीं हुआ था कि आप में घटनाओं का आविष्कार करने की ऐसी चमत्कारपूर्ण शक्ति है।

कैलास ने और कोई प्रश्न नहीं किया। उसे अपने पराभव का दुःख न था, दुःख था नईम की आत्मा के पतन का। वह कल्पना भी न कर सकता था कि कोई मनुष्य अपने मुँह से निकली हुई बात को इतनी ढिठाई से अस्वीकार कर सकता है; और वह भी उस आदमी के मुँह पर, जिससे वह बात कही गयी हो। यह मानवी दुर्बलता की पराकाष्ठा है। वह नईम, जिसका अंदर और बाहर एक था, जिसके विचार और व्यवहार में भेद न था, जिसकी वाणी आंतरिक भावों का दर्पण थी, वह नईम, वह सरल, आत्माभिमानी, सत्यभक्त नईम, इतना धूर्त, ऐसा मक्कार हो सकता है ! क्या दासता के साँचे में ढलकर मनुष्य अपना मनुष्यत्व खो बैठता है ? क्या यह दिव्य गुणों का रूपांतर करने का यंत्र है।

अदालत ने नईम को 20 हजार रुपयों की डिक्री दे दी। कैलास पर वज्रपात हो गया।

इस निश्चय पर राजनीतिक संसार में फिर कुहराम मचा। सरकारी पक्ष के पत्रों ने कैलास को धूर्त कहा; जन-पक्षवालों ने नईम को शैतान बताया। नईम के दुस्साहस ने न्याय की दृष्टि में चाहे उसे निरपराध सिद्ध कर दिया हो पर जनता की दृष्टि में तो उसे और भी गिरा दिया। कैलास के पास सहानुभूति के पत्र और तार आने लगे। पत्रों में उसकी निर्भीकता और सत्यनिष्ठा की प्रशंसा होने लगी। जगह-जगह सभाएँ और जलसे हुए, और न्यायालय के निश्चय पर असंतोष प्रकट किया गया; किंतु सूखे बादलों से पृथ्वी की तृप्ति तो नहीं होती ? रुपये कहाँ से आवें और वह भी एकदम से 20 हजार ! आदर्शपालन का यही मूल्य है, राष्ट्र-सेवा महँगा सौदा है। 20 हजार ! इतने रुपये तो कैलाश ने शायद स्वप्न में भी न देखे हों और जब देने पड़ेंगे ! कहाँ से देगा ? इतने रुपयों के सूद से ही वह जीविका की चिन्ता से मुक्त हो सकता था। उसे अपने पत्र में अपनी विपत्ति का रोना रोकर चंदा एकत्र करने से घृणा थी। मैंने अपने ग्राहकों की अनुमति लेकर इस शेर से मोरचा नहीं लिया था। मैनेजर की वकालत करने के लिए किसी ने मेरी गरदन नहीं दबायी थी। मैंने अपना कर्तव्य समझकर ही शासकों को चुनौती दी। जिस काम के लिए मैं अकेला जिम्मेदार हूँ, उसका भार अपने ग्राहकों पर क्यों डालूँ। यह अन्याय है। सम्भव है, जनता में आंदोलन करने से दो-चार हजार रुपये हाथ आ जायँ; लेकिन यह सम्पादकीय आदर्श के विरुद्ध है। इससे मेरी शान में बट्टा लगता है। दूसरों को यह कहने का अवसर दूँ कि और के मत्थे फुलौड़ियाँ खायीं, तो क्या बड़ा जग जीत लिया ! तब जानते कि अपने बल-बूते पर गरजते ! निर्भीक आलोचना का सेहरा तो मेरे सिर बँधा, उसका मूल्य दूसरों से क्यों वसूल करूँ ? मेरा पत्र बंद हो जाय, मैं पकड़कर कैद किया जाऊँ, मेरा मकान कुर्क कर लिया जाय, बरतन-भाँडे नीलाम हो जायँ, यह सब मुझे मंजूर है। जो कुछ सिर पड़ेगी भुगत लूँगा, पर किसी के सामने हाथ न फैलाऊँगा।

सूर्योदय का समय था। पूर्व दिशा में प्रकाश की छटा ऐसे दौड़ी चली आती थी, जैसे आँख से आँसुओं की धारा। ठंडी हवा कलेजे पर यों लगती थी, जैसे किसी के करुण-क्रंदन की ध्वनि। सामने का मैदान दुःखी हृदय की भाँति ज्योति के बाणों से बिंध रहा था। घर में वह निस्तब्धता छायी थी, जो गृह-स्वामी के गुस रोदन की सूचना देती है। न बालकों का शोरगुल और न माता की शान्तिप्रसारिणी शब्द-ताड़ना। जब दीपक बुझ रहा हो, तो घर में प्रकाश कहाँ से आये ? यह आशा का प्रभाव नहीं, शोक का प्रभाव था; क्योंकि आज ही कुर्क-ज़मीन कैलास की सम्पत्ति को नीलाम करने के लिए आनेवाला था।

उसने अंतर्वेदना से विकल होकर कहा- आह ! आज मेरे सार्वजनिक जीवन का अन्त हो जायगा। जिस भवन का निर्माण करने में अपने जीवन के 25 वर्ष लगा दिये वह आज नष्ट-भ्रष्ट हो जायगा। पत्र की गरदन पर छुरी फिर जायगी, मेरे पैरों में उपहास और अपमान की बेड़ियाँ पड़ जायँगी, मुख में कालिमा लग जायगी, यह शांति-कुटीर उजड़ जायगा, यह शोकाकुल परिवार किसी मुरझाये हुए फूल की पँखड़ियों की भाँति बिखर जायगा। संसार में उसके लिए कहीं आश्रय नहीं है। जनता की स्मृति चिरस्थायी नहीं होती; अल्पकाल में मेरी सेवाएँ विस्मृति के अंधकार में लीन हो जायँगी। किसी को मेरी सुध भी न रहेगी, कोई मेरी विपत्ति पर आँसू बहानेवाला भी न होगा।

सहसा उसे याद आया कि आज के लिए अभी अग्रलेख लिखना है। आज अपने सुहृद् पाठकों को सूचना दूँ कि यह इस पत्र के जीवन का अंतिम दिवस है, उसे फिर आपकी सेवा में पहुँचने का सौभाग्य न प्राप्त होगा। हमसे अनेक भूलें हुई होंगी, आज हम उनके लिए आपसे क्षमा माँगते हैं। आपने हमारे प्रति जो सहवेदना और सुहृदयता प्रकट की है, उसके लिए हम सदैव आपके कृतज्ञ रहेंगे। हमें किसी से कोई शिकायत नहीं है। हमें इस अकाल मृत्यु का दुःख नहीं है; क्योंकि वह सौभाग्य उन्हीं को प्राप्त होता है, जो अपने कर्तव्यपथ पर अविचल रहते हैं। दुःख यही है कि हम जाति के लिए इससे अधिक बलिदान करने में समर्थ न हुए। इस लेख को आदि से अन्त तक सोच कर वह कुर्सी से उठा ही था कि किसी के पैरों की आहट मालूम हुई। गरदन उठाकर देखा, तो मिरज़ा नईम था। वही हँसमुख चेहरा, वही मृदु मुस्कान, वही क्रीड़ामय नेत्र । आते ही कैलास के गले से लिपट गया।

कैलास ने गरदन छुड़ाते हुए कहा- क्या मेरे घाव पर नमक छिड़कने, मेरी लाश को ठुकराने आये हो ?

नईम ने उसकी गरदन को और जोर से दबाकर कहा- और क्या, मुहब्बत के यही तो मजे हैं !

कैलास- मुझसे दिल्लगी न करो। भरा बैठा हूँ, मार बैठूँगा।

नईम की आँखें सजल हो गयीं। बोला- आह जालिम; मैं तेरी जबान से यही कटु वाक्य सुनने के लिए तो विकल हो रहा था। जितना चाहे कोसो, खूब गालियाँ दो, मुझे इसमें मधुर संगीत का आनंद आ रहा है।

कैलास- और, अभी जब अदालत का कुर्क-अमीन मेरा घर-बार नीलाम करने आयेगा, तो क्या होगा ? बोलो, अपनी जान बचाकर तो अलग हो गये !

नईम- हम दोनों मिलकर खूब तालियाँ बजायेंगे, और उसे बंदर की तरह नचायेंगे ?

कैलास- तुम अब पिटोगे मेरे हाथों से जालिम, तुझे मेरे बच्चों पर भी दया न आयी ?

नईम- तुम भी चले मुझी से जोर आजमाने। कोई समय था, जब बाजी तुम्हारे हाथ रहती थी। अब मेरी बारी है। तुमने मौका-महल तो देखा नहीं, मुझ पर पिल पड़े।

कैलास- सरासर सत्य की उपेक्षा करना मेरे सिद्धांत के विरुद्ध था।

नईम- और सत्य का गला घोंटना मेरे सिद्धांत के अनुकूल।

कैलास- अभी एक पूरा परिवार तुम्हारे गले मढ़ दूँगा, तो अपनी किस्मत को रोओगे। देखने में तुम्हारा आधा भी नहीं हूँ; लेकिन संतानोत्पत्ति में तुम जैसे तीन पर भारी हूँ। पूरे सात हैं, कम न बेश !

नईम- अच्छा लाओ, कुछ खिलाते-पिलाते हो या तकदीर का मरसिया ही गाये जाओगे ? तुम्हारे सिर की कसम बहुत भूखा हूँ। घर से बिना खाये ही चल पड़ा।

कैलास- यहाँ आज सोलहो दंड एकादशी। सब-के-सब शोक में बैठे उसी अदालत के जल्लाद की राह देख रहे हैं। खाने-पीने का क्या जिक्र ? तुम्हारी बेग में कुछ हो, तो निकालो; आज साथ बैठकर खा लें, फिर तो जिंदगी भर का रोना है ही।

नईम- फिर तो ऐसी शरारत न करोगे ?

कैलास- वाह, यह तो अपने रोम-रोम में व्याप्त हो गयी है। जब तक सरकार पशुबल से हमारे ऊपर शासन करती रहेगी, हम उसका विरोध करते रहेंगे। खेद यही है कि अब मुझे इसका अवसर ही न मिलेगा। किंतु तुम्हें 20,000 रु. में से 20 रु. भी न मिलेंगे। यहाँ रद्दियों के ढेर के सिवा और कुछ नहीं है।

नईम- अजी, मैं तुमसे 20 हजार रुपये की जगह उसका पँचगुना वसूल कर लूँगा। तुम हो किस फेर में ?

कैलास- मुँह धो रखिए !

नईम- मुझे रुपयों की जरूरत है। आओ कोई समझौता कर लो।

कैलास- कुँवर साहब के 20 हजार रुपये डकार गये, फिर भी अभी संतोष नहीं हुआ !

नईम- सरकारी कर्मचारियों द्वारा मामला करने में और भी जेरबारी होगी।

कैलास- अरे तो क्या मामला कर लूँ ? यहाँ कागजों के सिवा और कुछ हो भी तो !

नईम- मेरा ऋण चुकाने-भर को बहुत है। अच्छा, इसी बात पर समझौता कर लो कि मैं जो चीज चाहूँ, ले लूँ। फिर रोना मत।

कैलास- अजी, तुम सारा दफ्तर सिर पर उठा ले जाओ, घर उठा ले जाओ, मुझे पकड़ ले जाओ, और मीठे टुकड़े खिलाओ। कसम ले लो, जो जरा भी चूँ करूँ।

नईम- नहीं, मैं सिर्फ एक चीज चाहता हूँ, सिर्फ एक चीज !

कैलास के कौतूहल की कोई सीमा न रही। सोचने लगा, मेरे पास ऐसी कौन-सी बहुमूल्य वस्तु है ? कहीं मुझसे मुसलमान होने को तो न कहेगा। यही एक धर्म एक चीज है, जिसका मूल्य एक से लेकर असंख्य तक रखा जा सकता है। जरा देखूँ तो हजरत क्या कहते हैं ?

उसने पूछा- क्या चीज ?

नईम- मिसेज कैलास से एक मिनट तक एकांत में बातचीत करने की आज्ञा।

कैलास ने नईम के सिर पर एक चपत जमाकर कहा- फिर वही शरारत ! सैकड़ों बार तो देख चुके हो, ऐसी कौन-सी इंद्र की अप्सरा है !

नईम- वह कुछ भी हो, मामला करते हो, तो करो; मगर याद रखना, एकांत की शर्त।

कैलास- मंजूर है। फिर जो डिक्री के रुपये माँगे गये, तो नोंच ही खाऊँगा।

नईम- हाँ, मंजूर है।

कैलास- (धीरे से) मगर यार, नाजुक-मिजाज स्त्री है, कोई बेहूदा मजाक न कर बैठना।
नईम- जी, इन बातों में मुझे आपके उपदेश की जरूरत नहीं। मुझे उनके कमरे में ले तो चलिए !

कैलास- सिर नीचे किये रहना।

नईम- अजी, आँखों में पट्टी बाँध दो।

कैलास के घर में परदा न था। उमा चिंता-मग्न बैठी हुई थी। सहसा नईम और कैलास को देखकर चौंक पड़ी। बोली, आइए मिरज़ाजी। अबकी तो बहुत दिनों में याद किया।

कैलास नईम को वहीं छोड़कर कमरे से बाहर निकल आया; लेकिन परदे की आड़ से छिपकर देखने लगा कि इनमें क्या बातें होती हैं। उसे कुछ बुरा खयाल न था, केवल कौतूहल था।

नईम- हम सरकारी आदमियों को इतनी फुरसत कहाँ ? डिक्री के रुपये वसूल करने थे, इसीलिए चला आया हूँ। उमा कहाँ तो मुस्करा रही थी, कहाँ रुपये का नाम सुनते ही उसका चेहरा फक हो गया। गम्भीर स्वर में बोली- हम लोग स्वयं इसी चिंता में पड़े हुए हैं। कहीं रुपये मिलने की आशा नहीं है; और उन्हें जनता से अपील करते संकोच होता है।

नईम- अजी, आप कहती क्या हैं ? मैंने सब रुपये पाई-पाई वसूल कर लिये।

उमा ने चकित होकर कहा- सच ! उनके पास रुपये कहाँ थे ?

नईम- उनकी हमेशा से यही आदत है। आपसे कह रखा होगा, मेरे पास कौड़ी नहीं है। लेकिन मैंने चुटकियों में वसूल कर लिया ! आप उठिए, खाने का इंतजाम कीजिए।

उमा- रुपये भला क्या दिये होंगे। मुझे एतबार नहीं आता।

नईम- आप सरल हैं और वह एक ही काइयाँ। उसे तो मैं ही खूब जानता हूँ। अपनी दरिद्रता के दुखड़े गा-गाकर आपको चकमा दिया करता होगा।

कैलास मुस्कराते हुए कमरे में आये और बोले- अच्छा, अब निकलिए बाहर ! यहाँ भी अपनी शैतानी से बाज न आये ?

नईम- रुपये की रसीद तो लिख दूँ ?

उमा- तुमने रुपये दे दिये ? कहाँ मिले ?

कैलास- फिर कभी बतला दूँगा। उठिए हजरत !

उमा- बताते क्यों नहीं, कहाँ मिले ? मिरज़ाजी से कौन परदा है ?

कैलास- नईम, तुम उमा के सामने मेरी तौहीन करना चाहते हो ?

नईम- तुमने सारी दुनिया के सामने मेरी तौहीन नहीं की ?

कैलास- तुम्हारी तौहीन की, तो उसके लिए 20 हजार रुपये नहीं देने पड़े।

नईम- मैं भी उसी टकसाल के रुपये दे दूँगा। उमा, मैं रुपये पा गया। इन बेचारे का परदा ढका रहने दो।